किस्त-2

उसूले दीन

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह

अनादि और अनन्त

इस विश्व की प्रत्येक वस्तु से उसका अस्तित्व अलग वस्तु है। यह पहले भी उससे अलग थी अब भी अलग है और इसके उपरान्त भी अलग हो सकती है। इसीलिए वह नश्वर और सत्ताहीन है।

उत्तपन्न करने वाले से उसकी सत्ता भिन्न नहीं। अतः न तो वह उससे पूर्व भिन्न थी और न बाद में भिन्न हो सकती है इस प्रकार वह सदा से है और सदा रहेगी अर्थात वह अनादि है और अनन्त है।

सर्व-शक्तिमान

शक्ति गुण है और शक्तिहीनता अवगुण। जन्मदाता ब्रह्म समस्त अवगुणों से परे है। अतः उसमें शक्ति हीनता की छाया भी नहीं। वह सर्वशक्तिमान है प्रत्येक वस्तु पर उसका अधिकार है। जो वस्तु अपने में सत्ता रखने की क्षमता रखती ही नहीं, उसका जन्मदाता की शक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं। यह सृष्टिकर्ता का दोष नहीं वरन् उस वस्तु का है कि वह सत्ताधारी से अलग है।

ज्ञानी

शक्ति हीनत्व की भाँति अज्ञानता भी दोष है, अतः उत्पन्न करने वाला ब्रह्म अज्ञानता से दूर है। इस प्रकार उसे ज्ञानी मानना ही पड़ेगा, सच बात तो यह है कि उसके ज्ञानी होने में किसी प्रकार की आशंका भी नहीं है। स्वयं उसके उत्पन्न किये हुए प्राणियों में ज्ञान शक्ति का पाया जाना इस बात का सबूत है कि उत्तपन्न करने वाला ब्रह्म समस्त गुणों की खान है।

जीवनागार

ज्ञान और शक्ति के संयोग में ही जीवन के भाव भी संलग्न हैं। निर्जीव वही हो सकता है जो ज्ञान शक्ति से परे हो। ज्ञान शक्ति का न होना यह एक बहुत बड़ा दोष है। ब्रह्म में किसी भी दशा में दोष का निर्वाह नहीं। अतः ब्रह्म इस दोष से रहित है।

इच्छा शक्ति

विश्व नियंत्रण आशय के ज्ञान और उसी के अनुकूल विश्व रचना एवं शक्ति के कार्यों को नाम कामना शक्ति है। उत्तपन्न करने वाला शक्ति तथा ज्ञान का स्वामी है इसलिये समस्त इच्छाओं को कार्य रूप में परिणित करता है।

(अन्तग्राहक, श्रोता, सर्वदर्शी एवं सर्वोपस्थित)

''आन्तरिक ज्ञान'' आभास के ज्ञान का नाम है। और इसी के अधीन में दर्शक और श्रोता होना है। ये दोनों शब्द क़ुरआन में उत्तपन्न करने वाले के लिए प्रयोग किये गये हैं। ये भी ज्ञान के आश्य में निहित हैं।

जिन चीज़ों का ज्ञान किसी को देखकर या सुनकर या किसी अन्य उपायों से होता है उन सभी वस्तुओं से जन्मदाता भिज्ञ है। दृष्टा एवं श्रोता के वही अर्थ है सर्वोपस्थित सर्वदृष्ठा के भी यही अर्थ हैं कि वह बिना किसी उपाय अथवा लगाव के हमारी समस्त दशाओं की सूचना पा लेता है।

बागू शक्ति दाता

वह जिस प्रकार सभी वस्तुओं को जन्म देने वाला है उसी तरह जब जहाँ जो भी कहना चाहता है कह देता है। जैसे हज़रत मूसा के लिए वृक्ष में वागूशक्ति को उत्तपन्न कर दिया। इसे वागूशक्ति दाता कहते हैं।

सच्चा

जो शब्द उसके श्रेष्ठ तथा प्रधान विचारों से पैदा होते हैं वे कभी घटना के विरूद्ध तथा त्रुटिपूर्ण नहीं हो सकते, क्योंकि यह एक दोष है और वह प्रत्येक दोषों से रहित है। सच्चा होने का यही तात्पर्य है।

असिमित

जन्मदाता (ब्रह्म) की सीमा कतिपय गुणों में सम्भव नहीं। मुसलमानों के एक सम्प्रदाय ने ब्रह्म के लिए आठ गुणों को माना है तथा उन्हें ब्रह्म से भिन्न माना है जो सदा से है और सदा रहेंगे। अतः इस बात की आवश्यकता हुई कि इन गुणों के शीर्षक देकर पैग़म्बर के पवित्र परिवार के उपदेशों के प्रकाश में उनकी वास्तविक दशा सामने ला दी जाए। अन्यथा सच्चाई के वास्तविक स्थान में केवल वही ही वही है। उससे भिन्न कोई गुण नहीं है। कौशल-लक्षण के अनुसार उसके गुणों को सीमाबद्ध करना नितान्त असम्भव है।

वे गुण जो उसमें नहीं

सर्वप्रथम यह कहा जा चुका है कि ब्रह्म सत्ता से भिन्न नहीं। समस्त अवगुण नास्ति में निहित हैं। अतः वह अवगुणों से रहित है। निम्नलिखित बातें गुणों में से हैं। इनके विरूद्ध कोई अवगुण उसमें नहीं है।

1- निराकार हैः- शरीर, घिरा हुआ, सीमित, दिशायुक्त, गृह में आश्रय पाने का अभिलाषी तथा मिश्रित होता है। ये सब बातें कामना रहित जन्मदाता ब्रह्म की मर्यादा के विरूद्ध हैं। अतः यह मानना पड़ेगा कि वह निराकार है।

2- मिश्रितनहीं:- जो मिश्रित होगा उसमें अंश या भाग का होना अवश्यम्भावी है परन्तु जो सत्ता है तथा अनादि और अनन्त है वह कभी किसी भी दशा में मिश्रित नहीं हो सकती।

गृह विहीन हैः- घर में वही रहता है जिसके शरीर हो और सीमाबद्ध हो अर्थात् साकार हो। परन्तु ब्रह्म साकार नहीं, सीमाबद्ध नहीं अतः उसका कोई घर नहीं। उसे गृह में रहने की कोई आवश्यकता ही नहीं हो सकती। अतः वह गृह विहीन है।

मिश्रेय नहीं:- मिश्रेय का अर्थ हैं कि एक दूसरे का गुण बनकर अस्तित्व में आए। जिस प्रकार स्याही शरीर में। इस प्रकार वह अपने अस्तित्व के लिए दूसरे के अधीन होगी, जिसमें उसका मिश्रण हो। परन्तु उत्तपन्न करने वाला ब्रह्म हर तरह की आवश्यकताओं से ऊँचा है अतः उसका मिश्रण किसी वस्तु में सम्भव नहीं।

संयोग नहीं:- संयोग का अर्थ यह है कि दो वस्तुएं इस प्रकार मिल कर एक हो जायं कि जो संकेत एक की ओर किया जाए वही दूसरी की ओर भी हो जाए। जन्मदाता के अतिरिक्त प्रत्येक तत्व संभाव्य, जन्मित और अधीन एवं आश्रित है। यदि जन्मदाता के साथ कोई ऐसा तत्व मिल जाए तो वह भी इन दोषों से भ्रष्ट हो जायगा, और यह किसी भी दशा में सम्भव नहीं।

अदृश्य हैः- अदृश्य वह है जो आखों से दिखाई न दे। उस वस्तु का रंग और रूप होता है जो हमारी आँखों से दिखाई देता है। तथा स्थान व दिशाओं में सीमित हो। उत्तपन्न करने वाला ब्रह्म का न तो शरीर है न तो स्थान या दिशाओं में सीमित है। उसका कोई रंग और आकार नहीं। फिर उसका दिखाई देना किस प्रकार सम्भव हो। अब प्रश्न यह उठता है कि सम्भव है उसका हमारी आँखों से न दिखाई देना हमारी दृष्टि-शक्ति की निर्बलता से हो। ऐसी दशा में यदि उसकी अदृश्यता हमारी दृष्टि-शक्ति के अभाव अथवा निर्बलता के कारण हो तो हो सकता है कि कालान्तर में जब हम और हमारा विज्ञान उन्नति की चरम सीमा पर आ जाए तो हम उसे देख सकें। परन्तु जब यह उसकी महानता अथवा बलन्दी के कारण से है तो उसमें लोक परलोक, आज और प्रलय के बीच कोई अन्तर नहीं। क्योंकि उसकी उच्चता, आस्तित्व तथा कौशल पर किसी प्रकार के अन्तर का प्रभाव पड़ना नितान्त असम्भव है।

अपरिवर्तनशील है

उसका अस्तित्व परिवर्तित नहीं हो सकता क्योंकि परिवर्तन का निर्वाह सम्भाव्य वस्तुओं में है और ये उसकी मार्यादा के सर्वथा विरूद्ध है।

गुण ब्रह्म से भिन्न नहीं:-

इसका वर्णन प्रथम हो चुका है।

ब्रह्म की संज्ञा

वही विश्व को उत्तपन्न करने वाला ब्रह्म जिसकी

सत्ता अनिवार्य है, हर तरह के कौशलों का केन्द्र और हर प्रकार के दोषों से रहित है। उसी का वास्तविक नाम अल्लाह है। यह नाम अर्थात् अल्लाह (ब्रह्म) का नाम किसी अन्य को देना यह किसी भी दशा में उचित नहीं।

तौहीद के विश्व पर व्यवहारिक अभाव

तौहीद हमारे जीवन नियंत्रण का वास्तविक मूल है। इससे समस्त मानव समाज के लिए एक केन्द्र बिन्दु का विश्वास उत्तपन्न होता है। सहस्त्रों भिन्न-भिन्न जातियों, राष्ट्रों और वर्गों के भेदों के होते हुए भी उस एक ब्रह्म की स्वीकृति से जो सब का जन्मदाता है तथा उपास्य है, समस्त विश्व एक लड़ी में गुथ जाता है।

उसके अतिरिक्त यह भाव पैदा होता है कि हम प्रत्येक बन्धन से मुक्त नहीं हैं यादि प्रत्येक मनुष्य अपनी व्यक्तिगत कामनाओं का दास हो जाए तो एक प्रकार का द्वन्द अनिवार्य हो जाएगा क्योंकि प्रत्येक मनुष्यों की इच्छाओं में समता नहीं है। सबके मन अलग-अलग हैं। परन्तु इस बात का ज्ञान हो जाने पर कि हम सब एक ही परम पिता परमेश्वर की सन्तान हैं तथा उसके आज्ञाकारी और सेवक हैं, उसके उद्देश्यों की पूर्ति करना हम में से प्रत्येक का कर्तव्य है, एवम् उसके उद्देश्य समस्त मानवजाति के हित के लिए संग्रहीत है तो हमारे सब लोगों के कार्य करने का ढंग भी समस्त संसार के हित के लिए संगठित तथा एकत्रित होना चाहिए।

वह प्रभु अथवा विश्व नियन्ता कैसा है? वह सर्वोपस्थित सर्वज्ञाता तथा सर्वदर्शी है। अर्थात् सभी स्थान पर मौजूद, सभी स्थानों को देखने वाला तथा सब कुछ जानने वाला है। उससे ये भाव पैदा होता है कि कोई भी मनुष्य कोई कार्य अकेले में भी उसके विधान के विरूद्ध न करें। किसी भी कार्य को चोरी छिपे करके सन्तुष्ट न हो जाए यह सोच कर कि जो कुछ मैंने किया है उसे मेरे सिवा न तो किसी ने देखा और न किसी को यह ज्ञात हुआ। क्योंकि कोई देखे या न देखे, परन्तु वह हर तरह से देख रहा है। जो हमारा वास्तविक स्वामी है और वास्तव में जिसका हमें ध्यान रखना चाहिए तथा उसके लिए लज्जा रखनी चाहिए।

वह एक अकेला है अद्वितीय है अर्थात उसकी समता में न तो कोई लाभ पहुँचा सकता है और न हानि। अतः हमें उसे सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिए। उसकी प्रसन्नता तथा सन्तुष्टता केवल शुभ तथा पवित्र कर्मों और जनहित से प्राप्त होती है। उसकी अप्रसन्नता तथा असन्तुष्टता से भय करना चाहिए।

वह दुर्विचारों, दुष्कर्मों, धूर्तता छल कपट तथा घृष्टता से अप्रसन्न होता है। इस बात को स्मरण रखते हुए हमें किसी कुमार्गी के अथवा बुराई के मार्ग पर ले जाने वालों के प्रभाव में न पड़ना चाहिए और न किसी बुराई की ओर बुलाने वाले से डरें चाहे वह कितना ही भयानक, बलवान क्यों न हो। क्योंकि अगर ईश्वर तुम से प्रसन्न है तुम्हारा सहायक है तो संसार की कोई भी भयानक से भयानक शक्ति तुम्हारा बाल बाँका नहीं कर सकती है।

ईश्वर की शक्ति संसार में प्रत्येक पर आच्छादित है। इसलिए विश्व की कोई भी शक्ति इस योग्य या उसके समान नहीं है जिसकी ओर ध्यान दिया जाए। वह प्रत्येक कार्यों को करने की अमिट शक्ति योग्यता तथा क्षमता रखता है इस लिए किसी दुर्गम मंज़िल को उसके उद्देश्यों की पूर्ति के मार्ग में असम्भव न समझना चाहिए। वह निर्बलों का अन्तिम सहारा है निरुपायों का उपाय है, शक्तिहीनों की शक्ति है, अतः निर्बलता के कारण कभी मनुष्य को निराश न होना चाहिए। क्योंकि प्रत्यक्ष रूप में न सही पर परोक्ष रूप में उसकी शक्ति सदा निर्बलों के साथ है।

इस विश्वास से एक विस्तृत मानुषिक भ्रातृत्व की रचना होती है। जिससे प्रत्येक व्यक्ति परस्पर भाईचारा तथा समानता की भावना रखता है, केवल अपना ही नहीं बल्कि इसे व्यवहार रूप में परिणित भी करता है। सब एक ही उद्देश्य की ओर बढ़े चलते हैं।

ऐसी दशा में प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वे अपनी व्यक्तिगत अभिलाषाओं को सर्वोत्कृष्ट उद्देश्यों के लिए समर्पित कर दें, और व्यक्तिगत और संघीय जीवन में प्रत्येक दशा में उससे प्रसन्न तथा सन्तुष्ट करने के प्रयत्न में तत्पर रहें। किसी समय भी उसके विधान की अवहेलना न करें और न उसके आदेशों को पालन करना भूलें। इस संघ के प्रत्येक व्यक्तियों में स्वाभिमान तथा आत्मज्ञान हो। वे किसी लौकिक शक्ति के आगे अपने

सिर को न झुकाएं। उनकी उत्तेजना ऊँची हो जिससे वे कठिन से कठिन उद्देश्य की पूर्ति को दुर्गम और दुरूह न समझे। उनमें आत्मविश्वास हो जिससे वे कभी निराशा को पास न फटकने दें। उनमें दृढ़ता हो, जिससे वे कभी अपनी आत्मा के साथ समझौता न करें।

(नास्ति ईश्वरादन्यः कश्चन उपास्य :)

उपरोक्त सूत्र समस्त व्यवहारिक प्रभाव का स्रोत तौहीद का कलमा है। इसका अर्थ यह है कि ईश्वर से अतिरिक्त किसी को भी उपास्य मानना इस्लाम में सर्वथा निषेघ है इसका तात्पर्य यह है कि न तो हम उसके अतिरिक्त हम किसी को जन्मदाता, जीविका देने वाला तथा उसके मुक़ाबले में विश्व नियंता या विश्व प्रशासक मानते हैं, और न तो उसकी समता में उसकी आज्ञा के विरूद्ध किसी के समक्ष अपने सिर को अवनत करने को तैयार हैं। चाहे वह पत्थर, लोहे या लकड़ी इत्यादि की प्रतिभा हो चाहे वह प्रत्यक्ष शक्ति रखने वाला रक्त, भास मज्जा से निर्मित मनुष्य हो।

यह वही तौहीद का विश्वास है जो कि एक मुसलमान में (Conscience) अन्तः करण की स्वतन्त्रता का रक्षक है। जो सहस्त्रों अत्याचारों और नृशंसता की लौह शृंखलाओं से बंधे होने पर भी उसके हृदय की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखता है। जिसके कारण संसार की दासता स्वीकार करना उसकी शक्ति से बाहर हो जाता है।

इस आधुनिक युग में मुसलमानों की दरिद्रता, दीनता, और तबाही और पराधीनता का कारण यह है कि वे तौहीद के अस्तित्व से दूर हो गए हैं।

ज़बान पर ला-इला-ह इल लल्लाह (नास्ति ईश्वरा दन्यः कश्चन उपस्यः) ईश्वर (के अतिरिक्त कोई अन्य उपास्य नहीं) के आने से प्रत्यक्ष रूप में तो इस्लाम हो जाता है परन्तु वास्तविक रूप में नहीं। सच्चा इस्लाम और विश्वास उसी समय प्राप्त हो सकता है जब उस सूत्र की वास्तविक्ता का तत्व मस्तिष्क में अपना घर कर जाए।

अद्ल

अल्लाह के निर्दोष व्यक्तित्व को मानने का नाम तौहीद है तथा उसकी क्रियात्मक निष्कलंकता का नाम अद्ल है।

जिस प्रकार तौहीद इस्लाम का मूल सिद्धान्त है जो प्रायः जगत के सभी धर्मों में परिचित है। उसी प्रकार मुसलमानों के इमामिया सम्प्रदाय के विश्वास का मूल सिद्धान्त अद्ल (न्याय) है जिससे इस्लाम के समस्त सम्प्रदायों में इमामिया (शिया) सम्प्रदाय का विशेष रूप से परिचय होता है।

गुण-दोष की वास्तविकता

गुण-दोष की परिचायिका बुद्धि है जिससे जगत के समस्त कर्मों के गुण-दोष का ज्ञान होता है। यह दूसरी बात है कि हमारी बुद्धि अपनी अदूरदर्शिता के कारण किसी भी कर्म में पाये जाने वाले गुणों तथा दोषों को पहचानने में असमर्थ हो। यह हमारी अपनी अज्ञानता होगी। वास्तविकता के दृष्टिकोण से प्रत्येक कर्म में पक्षों की स्थिति का होना आवश्यक है जिन्हें यदि हमारी बुद्धि तीव्र एवम् दूरदर्शित होती तो बड़ी सुगमता से उसके गुण-अवगुण का ज्ञान अविलम्व प्राप्त कर लेती।

समस्त कर्मों में गुण या अवगुण स्वम् ही संलग्न रहते हैं। अनेकों सद्कर्मा ऐसे हैं कि जिनका कर्ता चाहे सज्जन हो या दुर्जन, प्रत्येक दशा में उत्तम ही रहते हैं। सज्जनों के द्वारा किये जाने पर तो वे उत्तम एवं पवित्र रहते ही हैं, दुर्जनों के द्वारा किये जाने पर भी दूषित नहीं होते हैं। इसी भाँति अनेकों दुष्कर्म ऐसे हैं जिनका कर्ता सज्जन हो या दुर्जन, प्रत्येक अवस्था में वे सदा दूषित ही रहते हैं। वे सद्पुरुषों के द्वारा किये जाने पर उत्तम नहीं हो जाते हैं।

अल्लाह को न्यायी कहने का अर्थ

अल्लाह को न्यायी कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि उसके समस्त कर्म विशुद्ध एवं न्यायपूर्ण होते हैं। अल्लाह के द्वारा दूपित एवं न्यायहीन कर्मों का होना सर्वथा असम्भव है अतः उसके कर्म सदैव पवित्र हैं।

अल्लाह के लिए सदा शुभ कर्म करते रहने का बन्धन किसी अन्य शक्ति की ओर से नहीं है जोकि उसकी शक्ति एवं मर्यादा के विपरीत हो, वरन् यह स्वम् उससे विशुद्ध एवम् सर्वोत्तम व्यक्तित्व की मांग है जिसका प्रतियोगी विश्व में अन्य कोई नहीं।

न्यायत्व के अर्थ समानता के नहीं है जिससे जगत

के प्रणियों में जो भिन्नता दिखाई देती है वह न्याय के विरूद्ध समझी जाय। सामर्थ्य, आवश्यकता तथा परिणाम के भेदानुसार अल्लाह के कर्मों में भिन्नता का पाया जाना न्याय की मांग है। न्याय का अर्थ यह है कि अल्लाह जो कर्म करता है वह न्यायोचित होता है दोषपूर्ण व्यर्थ तथा न्याय से परे कर्म अल्लाह के व्यक्तित्व से सदैव दूर है। इस प्रकार संसार में जो भिन्नता है वह भी न्यात्व के अनुसार है। जगत पिता की ओर से तनिक भी अन्याय का होना सम्भव नहीं।

न्यायत्व को मानना क्यों आवश्यक है।

बुराई उसी से होनी सम्भव है जिसमें बुराई का बीज हो। जो कि अवकाश पाने पर अंकुरित हो सके। अल्लाह का व्यक्तित्व सर्वथा विशुद्ध है। अतः अल्लाह के कर्मों में किसी भी प्रकार के दोष का पाया जाना कदापि सम्भव नहीं।

यदि कोई मनुष्य किसी भी बुरे कर्म को करता है तो या तो वह उस कर्म की बुराईयों से अनभिज रहता है अथवा यदि वह उन बुराईयों का ज्ञान रखते हुए भी करता है तो इसका कारण यह है कि किसी अपवित्र भावना से प्रेरित होकर दुष्कर्म करता है।

जन्मदाता ज्ञान और शक्ति से परिपूर्ण है। वह सर्वशक्तिमान सर्वज्ञानी है। अतः उसके निकट न तो अज्ञानता की सम्भावना है और न किसी की प्रेरणा पाकर किसी कर्म को करने में विवश होने की आशंका।

न्याय की सीमा

जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि जन्मदाता (अल्लाह) पूर्ण न्यायी है तो उसके व्यक्तित्व से अनाचार, और बुराईयों की जितनी भी सूरतें है उन सब का अभाव हो जाता है। जन्मदाता का अपने उत्पन्न किये हुए प्राणियों को दुष्कर्म करने के लिये विवश करना तथा उन दुष्कर्मों को करने के लिए उन्हें स्वयम् दण्डित करना, प्राणियों को ऐसी कठिना आज्ञाएं देना जिनके पालन करने में वे असमर्थ हों, आज्ञापालक प्राणियों के साथ अन्याय करके उनके किये हुए शुभ तथा पवित्र कर्मों से कम फल देना, अपने आदेशों की अवहेलना करने वालों को उनके अपराध से अधिक दंड देना, निरअपराधी प्राणियों को महान् संकट में डाल देना और अपने आदेशों को बिना उन तक पहुँचाए उनसे यह पूछना कि तुमने मेरी आज्ञाओं का पालन क्यों नहीं किया है, इत्यादि बातें जन्मदाता (अल्लाह) की मर्यादा के विपरीत हैं। उसके लिए इन बातों की कभी कल्पना भी न करनी चाहिए।

न्याय का मौकिल महत्व

जन्मदाता की इकाई नबूवत और क़यामत (प्रलय) तो सभी मुसलमानों के निकट धर्म के विशिष्ठ तथा अनिवार्य सिद्धान्त हैं। परन्तु यदि न्याय को न माना जाए तो रसूलों की प्रमाणिकता का न तो कोई आधार होगा और न प्रलय को मानने का कोई कारण। रसूल की आवश्यकता इसीलिए है कि अल्लाह उनके द्वारा विश्व के मनुष्यों का पवित्र पथ-प्रदर्शन करें। ऐसा करना उसका महान् तथा परम कर्तव्य है। अब यदि जन्मदाता के शुभ कर्मों में किसी प्रकार का बन्धन आवश्यक नहीं है तो फिर पवित्र पथ निर्देशन के उत्तरदायित्व का भार उस पर किसी भी प्रकार नहीं हो सकता। उसके आंतरिक रसूल की प्रमाणिकता अद्भुत घटनाओं (मोजज़ों) के द्वारा होती है। वह इस प्रकार कि वह रसूल अपने दावे में सच्चा न होता तो जन्मदाता इसके द्वारा अद्भुत घटनाओं को जो कि मनुष्यों के द्वारा घटित होनी असम्भव है, कभी भी घटित करता। अथवा वह किसी अलौकिक शक्ति को किसी अन्य मनुष्य को प्रदान कर देता है। परन्तु यदि यह समझ लिया गया कि सर्वशक्तिमान् अल्लाह के लिए प्रत्येक कार्य उचित है तो फिर इसका कोई उचित प्रमाण नहीं होता कि अल्लाह जिसके द्वारा किसी ऐसी आसम्भविक घटना को घटित करता है जो कि मनुष्यों के द्वारा घटित होनी सम्भव नहीं, वह सच्चा ही नबी हो।

इसी प्रकार प्रलय की बुनियाद दंड और प्रतिकार के अवश्यम्भावी होने पर है। यदि हम क्षण भर के लिए इस बात की कल्पना कर लें कि अल्लाह को अपने लिए न्यायशील होने की कोई आवश्यकता ही नहीं है तो फिर प्रश्न यह उठता है कि जगत में दण्ड और प्रतिकार की जो आस्था है वह किसके लिए है? इस प्रश्न का कोई सन्तोषजनक उत्तर न होगा।

यदि केवल नबियों के द्वारा अल्लाह के सन्देश देने के आधार पर इसे मान लिया जाए तो अभी बतलाया जा चुका है कि स्वम् नबियों की सच्चाई का प्रमाणित

होना बिना न्यायत्व के किसी भी दशा में सम्भव नहीं। फिर यदि उन नबियों के सन्देश देने के पश्चात् भी प्रलय कोई वस्तु न हो तो अल्लाह पर असत्य और वचन न पालन करने का दोषारोपण होगा परन्तु यदि समझा गया कि अल्लाह के लिए कोई बुराई, बुराई नहीं है तो फिर यह कोई दोष पूर्ण बात न होगी।

तात्पर्य यह कि सम्पूर्ण धार्मिक सिद्धान्तों की दीवाल मूल या नीव के न होने से धराशायी हो जायगी इसी से न्यायत्व के धर्म सिद्धान्तों में आस्था होने का कारण स्पष्ट है। कुरान ने इसी लिए स्पष्ट कहा है।

अस्ति सत्य न्यायाभ्याम् सह पूर्ण तवेश्वरस्य वार्ता। नहि कोडपि तस्य वार्ताम् परिवर्तयितुम् शक्नुयात्।

(तुम्हारे अल्लाह की बात सच्चाई और न्याय के साथ पूर्ण है, कोई भी उसकी बात को बदल नहीं सकता)

नह्यान्यायी मनुष्याणाम् ईश्वरः।

(अल्लाह मनुष्य पर अन्याय करने वाला नहीं है)

किंचिनमात्रपीश्वरस्या न्यायधर्मत्वम् नास्ति।

(अल्लाह के यहाँ तनिक भी अन्याय नहीं है।)

इमामिया मिशन की पत्रिका (उसूल दीन और कुरआन) में इस विषय में 40 आयतें लिखी गई हैं तो इस बात की प्रमाण हैं।

विवश्ता एवं स्वेच्छता

मनुष्य को उसके कर्म में बिल्कुल विवश समझना या यह मानना कि मनुष्य अपने कर्मों का कर्ता स्वयम् नहीं है अपितु अल्लाह है और फिर भी उसे आज्ञाओं की अवहेलना करने का दंड मिलना, नास्तिकता और शिर्क (अल्लाह में किसी अन्य को अल्लाह का अंश मानकर सम्मिलित कर देना) पर नर्क में डाला जाना न्यायप्रिय अल्लाह की मर्यादा के सर्वथा विपरीत है। अतः उपरोक्त बातों का मानना बिकुल व्यर्थ और अनुचित है। ये सब बातें निराधार हैं।

इसी प्रकार यह मानना कि मनुष्य स्वेच्चारी है। अपनी समस्त इच्छाओं की पूर्ति कर लेता है। अर्थात जो कुछ करने की इच्छा उसमें उत्पन्न होती है उसे प्रत्येक दशा में पूरी कर सकता है, कोई भी उसके मार्ग में बाधा नहीं डाल सकता। यह बात उस सर्वशक्तिमान की सद्वृत्ति के प्रतिकूल है। सच्चा दृष्टिकोण इन दोनों बातों के बीच का रास्ता है।

मनुष्य अपने अच्छे और बुरे कर्मों का स्वयम्कर्ता और उत्तरदायी है। अतः उस समय तक वह जो कुछ करना चाहता है करता है जब तक कि जन्मदाता की शक्ति उसके कार्मों में बाधा नहीं डाल देती है। उस समय मनुष्य उस कर्म को करने में असमर्थ हो जाता है और स्वेच्छानुसार किसी भी कर्म के करने में सफ़ल नहीं होता। इस रूप से उसके कर्मों के परिणाम का उत्तरदायित्व भी मनुष्य पर न होगा।

इमामिया मिशन से दो पत्रिकाएं जब्र व इख़्तियार (विवशता एवं स्वेच्छता) के विषय पर प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें इस विषय के प्रत्येक अंगों पर प्रकाश डाला गया है। वे इस समस्या को स्पष्ट तथा पूर्णरूप से समझने के लिए पर्याप्त है।

शोक, संकट और अत्याचार

संसार में अनेकों मनुष्य सदा अत्याचारों, आपत्तियों और संकटों के जाल में फंसे होते हैं। उनकी यह दुर्दशा न तो किसी दुरात्मा की देन है, न पूर्व जन्म के पापों का परिणाम और न यह जन्मदाता के अन्यायी होने का प्रमाण ही है, वरन् कभी-कभी ऐसा होता है कि मनुष्य विश्व प्रशासन के विधानों की अवहेलना करते हैं और अल्लाह के नियमों के विरूद्ध अपने विचार (जो वास्तव में बुरे हैं परन्तु आज्ञानता के कारण उन्हें ठीक समझते हैं) लेकर चलते हैं इसी का फल भोगते हैं। या कभी अपने इसी जीवन के पिछले समय के पापों का दंड अल्लाह की ओर से भोगते हैं। अगर ये दोनों बातें नहीं हैं तो विश्व प्रशासन की श्रृंखलाओं की कोई कड़ी है जिनके घेरे के अन्दर ये दुःख गौड़ रूप से अचानक आ जाते हैं। ऐसी दशा में इन कष्टों को सहने का प्रतिकार अल्लाह की ओर से सुख में मिलता है और इतना सुख मिलता है कि वे अपने गौड़ रूप में आए हुए कष्टों को बिल्कुल ही विस्मृत कर देते हैं। ऐसे संकट ग्रस्त मनुष्यों को सुख मिलने की सूचना पहले से नहीं मिलती वरन् अचानक उनका दुःख अपार सुख में परिवर्तित हो जाता है।

सोद्देश्य एवं निरुद्देश्य

अल्लाह के कर्म सोद्देश्य होते हैं अर्थात् वे किसी

उद्देश्य पर आधारित होते हैं। निरुद्देश्य कर्म कभी भी उससे होने सम्भव नहीं है। इसके साथ-साथ यह भी कहना आवश्यक है कि उसके कर्म उसके स्वार्थ के लिए नहीं वरन् जगत् के प्राणियों के लिये हैं। निःसन्देह अल्लाह परमार्थी है।

उसका व्यक्तित्व अद्वितीय है। उसके कर्मों के कारण स्वयम् उसके कर्मों की अच्छाईयाँ हैं या उन कर्मों से जगत के प्राणियों को लाभ पहुँचना होता है। जिसका लाभ कभी तो परोक्ष रूप में होता है, कभी-कभी प्रत्यक्ष रूप में। अस्तु उसके विशुद्ध व्यक्तित्व के अनुकूल ही उसके कर्म भी निःस्वार्थ तथा सोद्देश्य होते हैं।

धार्मिक विधान के लक्ष्य

मनुष्य जाति पर धार्मिक हैसियत से रीतियों का भार डालना नेकी के अतिरिक्त किसी भी दशा में बुराई नहीं। इससे तो मानव जाति के व्यक्तित्व की श्रेष्ठता दुर्गुणों को त्याग कर सदगुणों या शुभ बातों को ग्रहण करने से उसकी जातीय प्रतिभा प्रकट होती है।

यह कल्पना करना कि आज्ञाएं उन्हीं के लिए होती हैं जो उनका पालन करते हैं और जो उसकी आज्ञाओं की अवहेलना करते हैं उनके लिए अल्लाह की आज्ञाएं नहीं होती अनुचित होगा। क्योंकि आज्ञाओं के पालन और उल्लंघन में जो अन्तर है वह स्वयम् उन आज्ञाओं को सर्वग्राह्य होने या सब पर लागू होने के ही कारण है। फिर उन आज्ञाओं में भिन्नता का कारण क्योंकर हो सकता है। इसके अतिरिक्त आज्ञा पालन करने वालों का उच्चपद जो इन कष्टों के सम्मानित या प्रशंसनीय होने का भेद है वह उनके सर्वसाधारण पर लागू होने के साथ ही निहित है।

ऐसे ही उन सभी पदार्थों की उपस्थित मनुष्य के अद्भुत कौशलों के प्रकाशमान होने का कारण है। उमंगों तथा उनके पात्रों के केन्द्र, इच्छाएं और उनकी पूर्ति के सभी यन्त्र यहाँ तक कि शैतान और उसके प्रतिनिधियों जैसे नमरूद, फिरऔन और यज़ीद जो बुरे कर्म करने वाले थे उन सब की उपस्थित संसार में अत्यन्त आवश्यक थी, यदि संसार में इनकी उपस्थित न होती तो अनेकों अच्छाईयाँ और विशिष्टताएं जो मनुष्यों में छिपी हुई थीं दृष्टि में न आ सकतीं। अतः शैतान के कर्मों की बुराईयाँ उनके व्यक्तित्व से सम्बन्धित है। ऐसे मनुष्यों का अस्तित्व में लाना जो अल्लाह का एक कर्म है, एक शुभ गुण है जिसमें दुर्गण की छाया भी नहीं है।

न्याय अन्याय की विवेचना

न्याय अन्याय का विलोम है। न्याय की माँग है कि अधिकारों के क्षेत्र में किसी के साथ अन्याय न हो। अर्थात् किसी के अधिकार छीने न जाएं।

ऐसी दशा में यह प्रश्न करना कि मनुष्यों की आयु, रूप, रंग, हृदय, मस्तिष्क, सम्पत्ति और सन्तान में भिन्नता क्यों है? कोई अर्थ नहीं रखता। इसका कारण यह है कि संसार के सभी मनुष्य साम्भाविक हैं। मनुष्य में अस्तित्व अपना नहीं है तो कौन सी ऐसी वस्तु है जो अपनी हो सकती है। क्योंकि जो कुछ अपना हो सकता है वह अस्तित्व के ही आधार पर हो सकता है। अल्लाह की हम पर असीम कृपा है कि वह हमें अस्तित्व देता है तथा विश्व के कार्य संचालन के अनुसार जितना जिसे चाहिये उतना प्रदान कर देता है।

अतः जिस किसी वस्तु को वह उत्तपन्न ही न करे तो उस पर कोई दोष आरोपित नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि किसी वस्तु को अस्तित्व में लाकर उसे जब चाहे मिटा दे तो हमें उससे कोई शिकायत न होनी चाहिए।

यदि कोई शिशु उत्पन्न होते ही मृत्यु को प्राप्त हो गया तो इसका कारण यह है कि उससे उतनी ही अवधि में उस ध्येय को पूर्ण कर दिया है जो सम्पूर्ण विश्व नियंत्रण की कड़ी होने के कारण उसके साथ लगा हुआ था। जिसके लिए उसका जन्म हुआ था। इस सम्पूर्ण विश्व-प्रशासन के क्षेत्र को तथा उसके संचालन के ध्येय को हम कहाँ समझते हैं जो उसके समस्त अंगों और उद्देश्यों को तथा उनके पारस्परिक मेलजोल को समझ सके। यह उस परिस्थित में है कि जब उस शिशु की परिचार्या में किसी मनुष्य ने सतर्कता से काम न लिया हो? क्योंकि प्रायः इस प्रकार के कष्ट जो मनुष्यों को मिलते हैं वे उनके कर्मों के परिणाम होते हैं जिसका उत्तर दायित्व अल्लाह पर नहीं होता है वरन् मनुष्यों पर होता है।

इसी भांति मनुष्यों के द्वारा मनुष्यों पर जो

अत्याचार होते हैं इनका उत्तरदायित्व अल्लाह पर नहीं होता क्योंकि अल्लाह ने मनुष्यों को अपने कर्मों का स्वामी बनाया है जैसा चाहें वैसा करें। परन्तु उनके बुरे और अच्छे कर्मों का परिणाम बुराई और भलाई में मिलने का विधान भी अल्लाह ने बना रक्खा है। इसलिए मनुष्य अपने कर्मों का उत्तरदायी स्वयम् है, अल्लाह नहीं। फिर भी इन अत्याचारों के समय धैर्य रखने तथा सहन करने पर अल्लाह उन्हें पुण्य प्रदान करता है यह उसकी असीम दया दृष्टि है।

अब इस बात पर विचार करना है कि अल्लाह ने किसी को मनुष्य बनाया, किसी को पशु, कोई वृक्ष है और कोई पत्थर। ऐसी दशा में यह अन्तर उस वस्तु के व्यक्तित्व से सम्बन्धित है जो अलग नहीं हुआ करते। अल्लाह का काम तो विश्व की मांगों के अनुसार भांति-भांति के पदार्थों को उत्तपन्न कर देना होता है। उसे मनुष्यों को भी उत्तपन्न करना आवश्यक था और पशुओं को भी इसी प्रकार वृक्षों और पत्थरों को भी। तथा अन्य वस्तुओं को भी। इसमें से जो भी वस्तु उत्तपन्न न होती वह विश्व नियंत्रण के एक आवश्यक अंग का अभाव होती, अतः यह अन्याय होता।

इस पूर्णरूपेण कुशल प्रशासक एवं सृष्टिकर्ता (अल्लाह) के द्वारा निर्मित की गई जो भी वस्तुएं हैं वे जैसी होनी चाहिए थीं वैसी ही हैं। यही वास्तविक न्याय है। इसके विरूद्ध होना अल्लाह से सम्भव नहीं है।

आत्मा की उत्तपित के पूर्व उससे ली जाने वाली प्रतिज्ञाएं

पवित्र कुरआन एवं पैग़म्बरों की पवित्र वाणियों में मनुष्य की उत्तपत्ति से पूर्व प्रतिज्ञाएं लिये जाने तथा मनुष्यों की भाँति-भाँति की अच्छी व बुरी मिट्टी का वर्णन इतनी अधिकता से तथा विस्तारपूर्वक है कि उसमें से किसी भी बात को अस्वीकार करना सम्भव नहीं। इसमें से कोई बात मानुषिक क्रियाओं पर इस प्रकार प्रभावित नहीं मानी जा सकती कि मनुष्य अपने कर्मों में विवश और असमर्थ समझा जाए जिसके पश्चात् उसके अच्छे और बुरे कर्मों का उत्तरदायित्व मनुष्य पर न होकर अल्लाह पर रहे। यह किसी भी दशा में उचित न होगा।

जीवन और मृत्यु

विश्व में होने वाली घटनाओं और प्रतिदिन होने वाले परिवर्तनों की तरह जीवन और मृत्यु भी अल्लाह के आदेशों और उसके नियमों के अधीन हैं। परन्तु जिस प्रकार प्रत्येक वस्तु में भाग्य के आधीन उपाय भी होता है, और जब तक अल्लाह की प्रेरणा मनुष्यों के प्रयत्नों के विरूध अपना काम न कर गई हो उस समय तक मनुष्य के उपाय सफल भी हो सकते हैं। इसी प्रकार जीवन और मृत्यु को भी समझना चाहिए।

ऐसी दशा में वर्तमान समय के यह समाचार कि किसी डॉक्टर ने किसी मृतक को जीवित कर लेने में सफलता पाई। अर्थात् उस मनुष्य की मृत्यु आ जाने के पश्चात् डाक्टर ने मृत्यु को हटा दिया और उसे जीवित कर दिया, यह किसी धार्मिक सिद्धान्त के प्रतिकूल नहीं है।

परन्तु एक मंज़िल दुनिया के सभी प्राणियों पर ऐसी आ जाती है कि जब उसके सभी प्रयत्न विफल हो जाते हैं। उसी प्रकार मृत्यु का वह एक दौर आना आवश्यक है जब सभी डॉक्टर किसी को जीवित करने से तंग आ जाएं तो यह अल्लाह के निर्णय के अटल होने का प्रमाण होगा।

न्याय के विश्वास का व्यवहारिक फल

अल्लाह का न्याय वह है जो उसके बन्दों से भी न्याय और सदाचरण का इच्छुक है। अल्लाह की ओर से हमें एक ऐसा अधिकार या ऐसी धरोहर प्राप्त है जिसका नाम है स्वेच्छाचार। हमें इस अधिकार का उचित प्रयोग करना चाहिए।

इस विश्वास से अल्लाह को एक मानने वालों के समुदाय में पारस्परिक अधिकारों और सीमाओं की नियुक्ति की जड़ें बलवती और दृढ़ होती हैं। इन्हीं सीमाओं से आगे बढ़ने का नाम अन्याय होता है। अन्याय और अत्याचार करने वालों से अल्लाह अप्रसन्न होता है। वह अल्लाह की कृपा दृष्टि से सदा दूर रहता है।

न्याय पर विश्व के आधार पर संसार में धनी निर्धन, सबल निर्बल इत्यादि के सब अन्तर अवास्तविक और सामयिक माने जाते हैं। अतः बनी आदम को कभी

(शेष..... पेज 12 पर)

के साथ अच्छा सुलूक करने के नमूने पहले ही पेश कर दिये हैं। हज़रत अली[अ०] ने अपने फ़ौजियों को ख़ास कर कहा था कि अगर "अल्लाह की मदद से दुश्मन हार जाए तो जो भाग रहे हों, उन्हें क़त्ल न करना, जो दुश्मन अपने बचाव पर ताक़त न रखता हो उसे नुक़सान न पहुँचाना, किसी घायल को क़त्ल न करना"। (नहजुल बलाग़ह नामा-14 पेज-280) नहरवान की जंग में हज़रत अली[अ०] ने दुश्मन के चालीस घायलों को अपनी राजधानी कूफ़ा भेज दिया, जहाँ उनका पूरा इलाज करवाया गया। (इब्ने असीर, अल-कामिल फ़ित्तारीख़, जिल्द-2 पेज-424/अल-बलाज़री, अन्साबुल अशराफ़, जिल्द-3 पेज-284) दुश्मन फ़ौज के चार सौ घायलों को उनके रिश्तेदारों के हवाले कर दिया ताकि वह ख़ुद उनका इलाज करवाएं। (तारीख़े तबरी, जिल्द-4 पेज-66) दुश्मनों के साथ ये वह बेमिसाल तरीक़ा है जिसकी मिसालें सिर्फ़ इस्लाम ही में मिलेंगी।

यहूदियों ने ईसाई क़ैदियों पर बहुत ज़ुल्म और सितम किए हैं। यहूदी बादशाह ज़ु-नवास ने जब नजरान पर हमला किया तो वहाँ के ईसाइयों को जिंदा जला दिया, जिसकी तरफ़ क़ुरआन मजीद में भी इशारा मौजूद है। मतलबः "और मौत आ जाए आग से भरी ख़न्दक़ वालों पर, जबकि उनके किनारे बैठे हुए थे और ईमान वालों के जलने का नज़ारा देख रहे थे। ये मोमिनों से सिर्फ़ इस बात का बदला ले रहे थे कि वह ज़बरदस्त और ताक़तवर ख़ुदा पर ईमान लाए थे।" (सूरह अल-बुरूज, आयतः 2-8) ज़ुल्म ये है कि यहूदी ये सभी ज़ुल्म अपनी मज़हबी किताब तौरेत को बुनियाद बनाकर अंजाम दिया करते थे, मतलबः "हमारे ख़ुदा यहूद ने हमें सेहून मुल्क ख़श्बून पर जीत दी। हम ने वहाँ के सारे रहने वालों को बर्बाद कर दिया, किसी मर्द, औरत या बच्चे को ज़िन्दा नहीं छोड़ा।" (तौरेत, सफ़र तसनिया, बाबः 2 आयतः 1-7)

ग्यारहवीं सदी ईसवीं के आख़िर से लेकर तेरहवीं सदी के ख़ातमें तक, ईसाईयों और मुसलमानों के बीच 8 सलीबी जंगें हुईं। इन सभी जंगों की इंसानी तारीख़ में मिसाल नहीं मिलती। एक ईसाई लिखने वाला 'गुस्ताबोलून' ने ख़ुद इक़रार किया हैः "मुसलमानों के साथ ईसाईयों का सुलूक इन जंगों में साबित करता है कि कि उनसे बढ़कर वहशी और बेदर्द ज़मीन पर कोई न था। ये दोस्त-दुश्मन, फ़ौजी-ग़ैर फ़ौजी, मर्द और औरत, छोटे-बड़े की कोई तमीज़ नहीं करते थे और सबको बेदर्दी से क़त्ल कर देते थे।" बैतुल मुक़द्दस में ईसाईयों ने जिस तरह मुसलमानों का ख़ून बहाया है उसको रार्बट नाम के ईसाई राहिब ने ख़ुद बयान किया हैः "हमारे फ़ौजी शहर की गलियों, मैदानों और मकान की छतों पर घूम रहे थे ताकि मुसलमानों के ख़ून से अपनी प्यास बुझा सकें। ये फ़ौजी बच्चों, बूढ़ों और जवानों को क़त्ल कर रहे थे और उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर रहे थे। बैतुलमुक़द्दस की गलियाँ लाशों से पटी पड़ी थीं और ख़ून नहर की तरह बह रहा था..... 12 दिसम्बर इतवार के दिन तुर्कों का आमतौर पर ख़ून बहाया गया, क्योंकि एक ही दिन में सबको क़त्ल करना मुमकिन न था इसलिए हमारी फ़ौज ने दूसरे दिन दोबारा क़त्ल करना शुरु किया.... अफ़सोस-अफ़सोस उन संगदिल अंधों पर। हक़ीक़त में उन सब लोगों में एक भी मसीह के बेटे का सच्चा भरोसे वाला न था।" (गुस्ताबोलोन, तमद्दुने इस्लाम व अरब) **(जारी)**

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू), 25 मार्च 2011[ई०])

शेष..... उसूले दीन ....

अपने धन पर गर्व न करना चाहिए और किसी को अपने निर्धनता से दुःखित तथा हताश न होना चाहिए।

शिष्टाचार सर्वसाधारण के लिए मुक्ति का एक उत्तम मार्ग तथा उसका एक समान पूर्वि है। पाप चाहे अमीर करे या ग़रीब दोनों दंड के भागी होंगे। इसी भाँति पुण्य चाहे धनी करे या निर्धन दोनों पुरस्कृत किये जाएंगे।

अतः प्रत्येक मनुष्य को अपने कर्तव्य का ज्ञान होना चाहिए तथा अपने कर्मों में सचेष्ट रहना चाहिए।

प्रत्येक कर्म में उसकी सीमा से आगे बढ़ना या पीछे रह जाना दोनों अधर्म हैं। मानुषिक व्यवहार अपनी सीमा से आगे पीछे न हों।

जो भी कुछ कहें अथवा करें, मानवता की सीमा के बाहर न हो। इन्हीं गुणों के कारण मनुष्य न्यायी कहलाता है।

अल्लाह को न्यायी मानने वाले मनुष्यों को स्वयम् भी अपने-अपने कर्मों में न्याय को प्रथम तथा ऊँचा स्थान देना चाहिए। अपने कर्तव्यों को पालन करने वाला और सच्चा मुसलमान वही है जिसके जीवन के प्रत्येक कर्म न्याय पूर्ण हों। इसके विपरीत जिनके कर्मों में न्याय का स्थान नहीं है उसके सच्चे मुसलमान होने में संदेह हैं।